संपादकीय

देश के अलग-अलग भू-भागों में भारतीय संस्कृति अपने अलग-अलग स्वरूप में संचरित होती रहती है। मदन मोहन मालवीय जी ने कहा है-"भारत की एकता का मुख्य आधार एक संस्कृति है, जिसका प्रवाह कहीं नहीं टूटा। यही इसकी विशेषता है। भारतीय एकता अक्षुण्ण है, क्योंकि भारतीय संस्कृति की धारा निरंतर बहती रही है और रहेगी।" हजारों वर्षों से सनातन संस्कृति की यह अमृत धारा भारत के कण-कण में निरंतर प्रवाहित होती रहती है। देखा जाए तो संस्कृति उस जल के समान है जो जिस भी पात्र में रखा जाता है वही आकार ग्रहण कर लेता है और उस पात्र को पूर्णता प्रदान करता है। भौगोलिक और राजनैतिक रूप से 1 नवंबर 2000 को अस्तित्व में आया छत्तीसगढ़ उस सुंदर फूल के समान खिला हुआ है जो अपनी संस्कृति के सुगंध से सजीव और सुवासित है।

मेसोपोटामिया के दजला फरात से लेकर सिंधु और गंगा तक अविरल प्रवाहित होने वाली मानव संस्कृति की एक प्रबल धारा महानदी, शिवनाथ और इंद्रावती नदियों के किनारे फल-फूल रही है। भूगोल ने छत्तीसगढ़ को एक सीमा में जहाँ आबद्ध किया, वहीं संस्कृति ने छत्तीसगढ़ी मिट्टी की सुगंध को भारत सहित समूचे विश्व में फैलाया। सरगुजा के पाट से बस्तर के हाट तक विस्तृत इंद्रधनुषीय संस्कृति के वैविध्य से छत्तीसगढ़िया लोक आलोकित है। सुआ गीत के 'तरी हरी नाना रे नाना रे ना' की स्वर लहरियाँ लोक जीवन के श्रम और सौंदर्य को अभिव्यक्त करती हैं।

भारत बोध पत्रिका' का यह अंक 'कला का गढ़- छत्तीसगढ़ की संस्कृति और प्रदर्शनकारी लोक कलाओं पर केंद्रित है। पिछले दो वर्ष कोरोना वायरस के कारण समूची मानवता के लिए बहुत त्रासद रहे। क्षेत्र विशेष की सांस्कृतिक गतिविधियों एवं लोक कलाओं के विकास और प्रसार में कोरोना वायरस ने बहुत बाधाएँ पहुँचाई। यह भी सत्य है कि विगत दो दशकों से टेक्नोलॉजी आधारित सभ्यता के तीव्र विकास ने स्थानीय संस्कृति एवं लोक कलाओं हेतु बड़ी चुनौती खड़ी कर दी है।

वैश्वीकरण के प्रभाव से आचार-विचार, खान-पान, पहनावा, मनोरंजन से भरे जीवन में परस्पर आदान-प्रदान की जगह कुछ खास संस्कृतियों के प्रभुत्व से लोक कलाकार सशंकित होने लगे हैं। छत्तीसगढ के लोक कवि मीर अली मीर अपनी समृद्ध परंपरा और संस्कृति के प्रति युवाओं द्वारा होने वाली उपेक्षा को देखकर चिंतित होते हैं। वे अपनी कविता के माध्यम से छत्तीसगढ़ की पुरानी समृद्ध संस्कृति एवं परम्परा के विलुप्त हो जाने संबंधी संशय व्यक्त कर रहे हैं-

ए, नंदा जाही का रे, नन्दा जाही का रे

नन्दा जाही का

रचरच मचमच गेंड़ी मचईया

गाँव गली म पँड़की नचईया

मांदर के थाप म राहस रचाये

पंथी के धुन ल गाए बजाए

गाँव के लीला, चाऊँर के चीला

मेला मड़ई म ढेलवा झुलईया

नन्दा जाही का...।

जिस रफ्तार से हम दुनिया को बदलते देख रहे हैं वह अभूतपूर्व है। संचार तकनीक के तेज प्रसार से पश्चिमी सभ्यता के अन्धानुकरण की प्रवृत्ति बहुत बढ़ी है। इस परिप्रेक्ष्य में देखें तो अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के विनष्ट और विलुप्त होते जाने की चिंता बड़ी स्वाभाविक लगती है। अपनी विशिष्ट और अद्‌वितीय संस्कृति के संयोजन, संरक्षण एवं बार-बार रेखांकित करने की आवश्यकता आज बहुत ज्यादा बढ़ गई है। विभिन्न संस्कृतियों एवं लोक कलाओं की पहचान और उनके सांस्कृतिक महत्व को उद्‌घाटित करने का यह प्रयास अखंड भारत की सांस्कृतिक एकता को मजबूत करने में सहायक होगा।

हजारों वर्षों से संचित स्मृतियाँ संस्कृति के रूप में प्रवाहित होती हैं। यह लोक कलाओं के माध्यम से न केवल प्रकृति को स्पंदित करती हैं वरन् मानव समुदाय की जीवन शक्ति के रूप में दुनिया को और बेहतर बनाने में रचनात्मक भूमिका भी निभाती हैं। प्रदर्शनकारी लोक कलाएँ वस्तुतः लोकमानस की सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ हैं। छत्तीसगढ़ी संस्कृति और लोक कलाओं की इन्हीं अभिव्यक्तियों को पत्रिका के इस अंक में संजोने का एक विनम्र प्रयास किया गया है। कोशिश यही थी कि "छत्तीसगढ़िया, सबले बढ़िया' के रूप में जाने जाने वाले छत्तीसगढ़ी लोक के निर्माण में संस्कृति की जो महत्वपूर्ण भूमिका है उसके समस्त पक्षों को विभिन्न लेखों के माध्यम से आप सभी सुधी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत कर सकूँ। वह छत्तीसगढ़ जिसकी वंदना महतारी के रूप में बार-बार की जाती है। छत्तीसगढ़ी राजगीत की पंक्तियाँ और इसके गायन में मानों लोक के प्राण बसते हों-

अरपा-पैरी के धार

महानदी हे अपार

इंद्रावती हे पखारे

तोर पैंयाँ

जय जय हो छत्तीसगढ़ मइँया"

छत्तीसगढ़ मूलतः कृषि प्रधान राज्य है। 'धान का कटोरा' कहे जाने वाला ये भू-भाग प्राकृतिक संसाधनों से भी समृद्‌ध है। भिलाई का इस्पात संयंत्र कई दशकों से देश की अर्थव्यवस्था में अपना विशिष्ट योगदान दे रहा है। रामगढ़ में निर्मित भारत की पहली नाट्यशाला छत्तीसगढ़ की शान है। महाकवि कालिदास ने मेघदूतम की रचना यहीं की थी। छत्तीसगढ़ी संस्कृति को अंतर्राष्ट्रीय फलक पर पहचान दिलाने वाली पद्‌म विभूषण तीजनबाई का साक्षात्कार एक धरोहर के रूप में पत्रिका में संकलित है।

हमारी लोक संस्कृति में कोई भी शुभ कार्य राम नाम से शुरू करने की परंपरा रही है। छत्तीसगढ़ी लोक का राम से एक विशेष लगाव है। वे राम को अपना भांजा मानते हैं और उन्हें विशेष स्नेह देते हैं। भारत रत्न स्वर्गीय अटल बिहारी वाजपेई जी का मानना था-"उपासना, मत और ईश्वर संबंधी विश्वास की स्वतंत्रता भारतीय संस्कृति की परंपरा रही है।" इसी परंपरा निर्वहन में हम देखते हैं कि छत्तीसगढ़ में राम भक्ति के विविध आयाम हमें दिखाई देते हैं, जिसको पत्रिका में विभिन्न लेखों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। लोक के 'अपने अपने राम', के विविध स्वरूप और विशेषताओं को डॉ. पुनीत राय ने 'सरगुजा के लोक-जीवन में राम' विषयक लेख में प्रस्तुत किया है। अम्बरीश त्रिपाठी ने 'रामनामी सम्प्रदाय' की विशिष्टताओं और उसके स्वरूप पर शोधपरक ढंग से विचार किया है। राम के वनगमन यात्रा का एक बड़ा भू-भाग छत्तीसगढ़ में अवस्थित है। चौदह वर्ष के कठिन वनवास काल के दौरान अयोध्या से प्रयागराज, चित्रकूट सतना गमन करते हुए प्रभु श्री राम ने दक्षिण कोशल अर्थात् छत्तीसगढ़ के कोरिया जिले के भरतपुर पहुँचकर मवई नदी पारकर उत्तरीं छत्तीसगढ़ से चलते हुए दक्षिण के दण्डकारण्य में प्रवेश किया।

श्री राम का ननिहाल चंदखुरी छत्तीसगढ़ में है। राम छत्तीसगढ़ियों की जीवन-शैली और दिनचर्या का अभिन्न अंग हैं। छत्तीसगढ़ की अस्मिता के प्रतीक माता कौशल्या के पुत्र श्री राम छत्तीसगढ़ियों के लिए उनके भांजा हैं। इस रूप में उनका छत्तीसगढ़ वालों से गहरा नाता है। राम के वनगमन पथ के सामाजिक-सांस्कृतिक निहितार्थों को विस्तारपूर्वक डॉ. रामकिंकर पांडेय ने अपने शोध-पत्र में विश्लेषित किया है। डॉ. प्रिया राय ने सरगुजा संभाग में संत गहिरागुरु के माध्यम से रामायण गायन मंडलियों के प्रसार का सारगर्भित अध्ययन प्रस्तुत किया है।

लोकगीतों की मधुर तानों में लोक की आत्मा बसती है। वरिष्ठ कथाकार डॉ. उर्मिला शुक्ल ने छत्तीसगढ़ी संस्कार गीतों की विशिष्टताओं को उकेरा है। छत्तीसगढ़ उत्सवधर्मी प्रदेश है। प्रकृति और नृत्य की जुगलबंदी की थिरकन समूचे अंचल में महसूस की जा सकती है। संगीतज्ञ डॉ. मिलिंद अमृतफले ने गम्मत की थाप को शब्द दिए हैं। भरतनाट्यम् की प्रसिद्ध नृत्यांगना एवं प्राध्यापक प्रो. ऋचा ठाकुर ने लोकनृत्य करमा की विशिष्टताओं को शब्दों में पिरोया है। नाचा, राउत नाचा, पंथी, ददरिया, सुआ नृत्य आदि के स्वरूप और महत्व का विवेचन डॉ. गौरी त्रिपाठी, मुरारी उपाध्याय, डॉ. आस्था तिवारी, डॉ. विभाषा जैसे सुधी मर्मज्ञों ने किया है। 'दसमत कैना' के माध्यम से छत्तीसगढ़ी लोक के अधिकारिक विद्वान एवं हिंदी के ख्यात आलोचक डॉ. जय प्रकाश साव ने देवार जाति की सांस्कृतिक विशिष्टता को हमारे समक्ष रखा है। उन्होंने लोकपरक आख्यान का गहन विश्लेषण किया है। पण्डवानी की विशिष्टताओं और उसके अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप पर डॉ. सुधीर शर्मा का लेख सम्यक् प्रकाश डालता है। इतिहासविद् डॉ. किशोर कुमार अग्रवाल ने छत्तीसगढ़ में कबीर के प्रभाव और प्रसार को विश्लेषित किया है। पत्रिका में लोक के मर्मज्ञ डॉ. भुवाल सिंह ठाकुर ने संस्कृति की प्रकृति और प्रकृति की संस्कृति लेख के माध्यम से 'छत्तीसगढ़िया मन' के तंतुओं का भावनात्मक चित्र खींचा है। शोधार्थी निर्वेश कुमार दीक्षित ने लोकगायन की ही एक और समृद्ध परंपरा भरथरी गायन पर शोधपरक आलेख लिखा है। लोकविद् डॉ. शंकर मुनि राय ने बस्तर के जनजातियों की संस्कृति में घोटुल के महत्व की विवेचना की है, साथ ही उन्होंने देश की लगभग सभी जनजातियों में प्रचलित घोटुल जैसे सांस्कृतिक स्थलों का तुलनात्मक अध्ययन भी प्रस्तुत किया है। वहीं खैरागढ़ विवि. के

प्राध्यापक प्रो. राजन यादव ने छत्तीसगढ़ की प्रदर्शनकारी लोक कलाओं का विस्तार से वर्णन किया है। लोककला-नृत्य, संगीत की बात हो और वाद्य यंत्रों की महत्वपूर्ण भूमिका पर चर्चा न हो ये तो असंभव है। खैरागढ़ विश्व विद्यालय के संगीत विभाग के विद्वान संगीतज्ञ डॉ. लिकेश्वर वर्मा ने अपने शोध-पत्र में छत्तीसगढ़ लोक में उपयोग किये जाने वाले प्रतिनिधि वाद्य यंत्रों का सम्यक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। बस्तर अपने दशहरा त्यौहार हेतु विश्वविख्यात है। दशहरे में मनाए जाने वाले उत्सवों, उसकी परंपराओं को अपने शोध-पत्र में बस्तर की ही लोक-संस्कृति अध्येता और इतिहास के प्राध्यापक ओम प्रकाश सोनी ने विस्तार से प्रस्तुत किया है। बस्तर में दियारी (दीवाली) त्यौहार का भी अपना विशिष्ट स्थान है। दंतेश्वरी माता की भूमि दंतेवाड़ा में किस रूप में दियारी की तैयारी की जाती है इस पर लोकराग और लोकरंग में डूबी आस्था के साथ डॉ. पूनम का लेख पठनीय है।

किसी भी क्षेत्र विशेष की संस्कृति उस बड़े भौगोलिक संस्कृति के महीन तंतुओं से सम्बद्ध रहती है जिसमें वह क्षेत्र विशेष अवस्थित रहता है। छत्तीसगढ़ी संस्कृति भारतीय संस्कृति की ही अविरल धारा है जो भले कभी ऊपरी तौर पर भिन्न दिखे, किंतु वे असंपृक्त ही रहते हैं। इसी महत्वपूर्ण जुड़ाव के कुछ बिंदुओं को लोक गीतों के माध्यम से चिन्हित करने का काम दिल्ली विश्वविद्यालय के एक प्रसिद्ध महाविद्यालय में अध्यापनरत डॉ. अर्चना त्रिपाठी ने अपने शोध-पत्र में किया है। शोध-पत्र का शीर्षक है-'छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में भारतीय संस्कृति की उपस्थिति' । वहीं 'छत्तीसगढ़ के पारंपरिक नृत्यो 'का विशद् परिचय डॉ. सरस्वती वर्मा के आलेख से मिलेगा।

जैसा कि प्रसिद्ध दार्शनिक-मनोवैज्ञानिक Lev Vygotsky ने कहा है-"A mind can not be Independent of Culture" (कोई भी मानस संस्कृति से स्वतंत्र नहीं हो सकता)। महात्मा गाँधी जी भी कहते हैं कि 'एक राष्ट्र की संस्कृति उसमें रहने वाली जनता के हृदय और आत्मा में बसती है।'

मानव मन की समझ उस समुदाय की संस्कृति की समझ से ही संभव है। छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक समझ हमें एक राष्ट्र के तौर पर और मजबूत करेगी।

किंचित ये सनातन संस्कृति की चिरंतन धारा में सतत् अवगाहन करने के कारण ही संभव हुआ हो। संस्कृति की प्रबल धाराओं में डूबने से श्रम का स्वमेव परिहार हो गया है। सुधी पाठक भी इस विशिष्ट संस्कृति की शीतलता का अनुभव विभिन्न आलेखों के माध्यम से कर सकेंगे। ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है।